रामकृष्ण परमहंस की कहानियाँ

सन्तराम वत्स्य

रामकृष्ण परमहंस की कहानियाँ

सन्तराम बत्स्य

पुस्तकायन

श्री रामकृष्ण परमहंस की कहानियाँ

ज्ञान की गम्भीर बातों को, दृष्टान्त कथाओं द्वारा सुबोध और रोचक ढंग से हृदयंगम करवाना भारतीय मनीषियों की पुरानी सुपरीक्षित विधि है। हमारे पुराण और उपपुराण तो इन कथाओं के भण्डार ही हैं।

ये सत् कथाएँ जीवन-सत्य के किसी-न-किसी पक्ष को आलोकित करती हैं और हमारे मन-मस्तिष्क में छाए धुंधलके को हटाकर ज्ञान का प्रकाश फैलाती हैं।

इन कथाओं की एक विशेषता यह भी है कि ये अपने श्रोता या पाठक की ग्रहण-शक्ति के अनुसार अपने हृदय के मर्म का प्रकाश करती हैं। यही कारण है कि क्या बालक और क्या वृद्ध सभी इन्हें चाव से पढ़ते हैं। बड़े इनमें छिपे सारतत्व गुनते हैं और बालक कथा के घटना-क्रम और सद् और शुभ की विजय से उल्लसित होते हैं। बालक कहानी के पीछे की कहानी या उसके सार रूप को भले ही तत्काल ग्रहण न कर सकें, पर ज्यों-ज्यों उनके भाव क्षेत्र और मस्तिष्क का विकास होता जाता है, बीजरूप में उनके हृदयक्षेत्र में पैठी ये कथाएँ भी अंकुरित और पल्लवित होने लगती हैं। उनमें नई-नई शाखाएँ निकल आती हैं और सुगन्ध पुष्पों के बाद सुफल भी लगते हैं। फिर तो जैसे पहाड़े याद होने पर गणित के प्रश्नों को हल करने में सहायता मिलती है, वैसे ही जीवन की समस्याओं के समाधान में भी ये सहायक सिद्ध होती हैं।

सत्य की एक किरण, सौन्दर्य की एक झाँकी और आत्म-ज्योति का आलोक जीवन का संबल बन जाता है और अन्धकार पर प्रकाश की विजय होती है।

परमपुरुष रामकृष्ण परमहंस पोथीपण्डित नहीं, आत्मदर्शी महापुरुष थे। उन्होंने अपने जीवन में परम सत्य की उपलब्धि की थी। उसी सत्य को बहुजन हिताय उन्होंने अपने सरल और हृदयहारी उपदेशों में प्रकट किया था।

हम इस श्रद्धा और विश्वास के साथ इन अमृतधर्मा कहानियों को प्रस्तुत कर रहे हैं कि ये पाठकों को तृप्ति, मानसिक निर्मलता और आध्यात्मिक पुष्टि प्रदान करेंगी।

कहानियों का क्रम

क्रम			पृष्ठ
१.	काँटे में भी वही है और फूल में भी	...	५
२.	ढाई आखर प्रेम के पढ़े सो पण्डित होए	...	८
३.	माया महाठगनी हम जानी	...	१२
४.	धन से भरे सात घड़े	...	१८
५.	लंगोटी की करामात	...	२७
६.	गहरे पानी पैठ	...	३३
७.	दाता एक राम भिखारी सारी दुनिया	...	३७
८.	मीठा-मीठा गप्प	...	४१
९.	जैसी दृष्टि वैसी सृष्टि	...	४५

काँटे में भी वही है और फूल में भी

गाँव के बाहर एक वनखण्डी में छोटा-सा शिवालय था। शिवालय के पास ही छोटी कुटियाएँ थीं। इनमें साधु-महात्मा, रमते जोगी आकर ठहर जाते और कुछ दिनों बाद चले जाते। वे दोपहर को गाँव में जाकर द्वार-द्वार पर 'नमो नारायणाय' की पुकार लगाते। अगर कोई गृहस्थ उन्हें भिक्षा दे देता, तो लेकर वापस कुटिया पर लौट जाते और न देता तो अगले द्वार पर 'नमो नारायणाय' का घोष करते।

एक नया आया हुआ युवा संन्यासी इसी तरह 'नमो नारायणाय' का घोष करता गाँव के प्रमुख जमींदार के द्वार पर पहुँचा। उसने देखा कि जमींदार अपने नौकर को बड़ी निर्दयता से पीट रहा है। उस युवा संन्यासी से यह नहीं देखा गया। वह बोला, "भगवान आपका मंगल करे। इस बेचारे को इस बेरहमी से मत पीटिये। कहीं मर गया तो लेने के देने पड़ जाएँगे।"

जमींदार तो क्रोध में अन्धा-बहरा हो रहा था। उसने महात्मा की बात को अनसुनी कर दिया और उसी तरह पीटता रहा।

महात्मा ने उसके बहरे कानों तक अपनी बात पहुँचाने के लिए जोर से कहा—

गरीब को न सताइये, बुरी गरीब की आह।
मरे बकरे की खाल सों, सार भस्म हो जाय॥

जमींदार का क्रोध भड़क उठा। उसे यह उपदेश अच्छा नहीं लगा। सारा गाँव जमींदार का रौब मानता था और भिखमंगा साधु जमींदार को रोक-टोक रहा था। जमींदार ने साधु को सबक सिखाने की सोची। वह नौकर को पीटना छोड़कर साधु को पीटने लगा। इतना पीटा, इतना पीटा कि साधु बेहोश होकर गिर पड़ा।

पास-पड़ोस के लोग इकट्ठे हो गए थे। उन्होंने बेहोश साधु को चारपाई पर डालकर उठाया और कुटिया पर ले गये। पंखा झला, मुँह पर पानी के छींटे दिए और हल्दी डालकर हल्का गर्म दूध चम्मच से साधु के मुँह में डाला।

थोड़ी देर बाद साधु ने आँखें खोल दीं।

यह जानने के लिए कि महात्मा जी पूरी तरह होश में हैं कि नहीं, उनके दूध पिला रहे साथी ने पूछा, "महाराज! मुझे पहचान रहे हैं कि नहीं। बताइये कि मैं कौन हूँ।"

जमींदार से पिटे हुए महात्मा बोले, "खूब पहचान

रहा हूँ। पहले तो तुमने मुझे खूब पीटा और अब मुझे दूध पिला रहे हो।"

× × ×

वह महात्मा सच्चा ज्ञानी था। उसे सभी में भगवान दिखता था। पीटने वाले में भी और दूध पिलाने वाले में भी।

जिधर देखता हूँ, उधर तू ही तू है।
कि हर शै[1] में जलवा[2] तेरा हू-ब-हू है।

ढाई आखर प्रेम के पढ़े सो पंडित होए

एक कथावाचक पंडित जी थे। गौर वर्ण, चौड़ा माथा और बहुत करीने से लगाया हुआ वैष्णव तिलक। गले में तुलसी माला। उजले सफेद वस्त्र और कन्धे पर रामनामी उत्तरीय। बढ़े हुए गर्दन को ढकते लम्बे बाल।

उनकी विद्वत्ता का लोहा सभी मानते थे। एक-एक शब्द के कई-कई अर्थ बताना, व्याकरण की बारीकियाँ, प्रसंग को पुष्ट करने के लिए अन्य ग्रन्थों के उद्धरण देना—सभी कुछ उन्हें आता था। उमर उनकी साठ

---

१. वस्तु २. प्रकाश, रूप

के पास पहुँच चली थी पर शरीर स्वस्थ और पुष्ट था।

विद्वानों में यह कहावत प्रचलित है कि "विद्वानों की परीक्षा भागवत् में होती है।" और ऐसी कई छोटी-मोटी परीक्षाओं में पंडित जी पास हो चुके थे। लोगों में 'भागवत् व्यास' के नाम से उनकी प्रसिद्धि हो गई थी।

भक्तों ने पंडित जी से अनुरोध किया कि महाराज अगर राजमहलों में एक बार आपकी कथा हो जाए तो पंडित-मण्डली में सिक्का जम जाएगा और दक्षिणा भी खूब मिलेगी।

पंडित जी को लगा कि बात तो ठीक है। वे खूब सज-सँवर कर राजा जी के पास गए और कथा सुनाने की इच्छा व्यक्त की। पंडित जी यह बताना नहीं भूले कि वे भागवत् व्यास के नाम से प्रसिद्ध हैं और उन जैसा कथावाचक दूसरा इस प्रदेश में नहीं है। भागवत् को उन्होंने इतनी बार पढ़ा और सुनाया है कि उन्हें सब कुछ याद हो गया है।

पर राजा भी गुणी था। वह बातों से बहलने वाला नहीं था। उसने पंडित जी से निस्संकोच कहा कि एक बार फिर अच्छी तरह श्रीमद्भागवत् का मनन के साथ परायण करें तब आएँ। अभी आपको भागवत् का मर्म मालूम नहीं है।

यह अपमान का घूँट पंडित जी ने बड़ी कठिनाई से निगला। वे राजा को नाराज करना नहीं चाहते थे। राजा के नाराज होने पर उनके लिए महलों के दरवाजे बन्द हो जाते। इस तरह यश और धन दोनों से हाथ धोने पड़ते। विरोधी लोग खिल्ली उड़ाते वह अलग। पंडित जी अपना-सा मुँह लेकर लौट तो आए पर मन में राजा की मूर्खता पर सौ फब्तियाँ कसते हुए। उन्हें सूरदास का पद याद आया :

मूरख मूरख राजे कीने।
पंडित फिरत भिखारी॥
ऊधो! कर्मन की गति न्यारी।

पंडित ने मन में सोचा, 'मैंने सारी उमर भागवत् ही पढ़ा और लोगों को कथा सुनाई पर अपनी प्रभुता में मतवाला यह राजा कहता है कि अभी मुझे भागवत् का ज्ञान नहीं है।' एक बार फिर पंडित जी ने भागवत् का जल्दी-जल्दी पाठ किया और राजा के पास गए। बोले, "महाराज! आपके कहने के अनुसार मैंने एक बार फिर भागवत् का पाठ कर लिया। अब बताइए कि कथा कब शुरू करनी है?"

राजा ने कहा, "मेरे विचार में अभी भी आपको भागवत् के मर्म को पाना बाकी है। मेरी बात मानें तो एक बार जरा गंभीरतापूर्वक श्रीमद्भागवत् का

मनन कीजिए। फिर हम आपके श्रीमुख से कथा श्रवण करेंगे।"

मरता क्या न करता ! पंडित जी फिर घर लौट आए और राजा को खरी-खोटी कहने लगे।

पंडिताइन ने पंडित जी से कहा, "राजा जी जो आपसे बार-बार कह रहे हैं कि दोबारा पढ़कर आइये तो उनके कथन का कुछ गम्भीर अर्थ होगा।"

पंडित जी ने निश्चय किया कि एक बार फिर मनन-चिन्तन के साथ मैं श्रीमद्भागवत् का पारायण करूँगा।

इस बार जब श्रद्धा-भक्तिपूर्वक 'स्वान्तः सुखाय' पंडित जी ने पढ़ना प्रारम्भ किया तो नए-नए भाव उनके मानस-क्षितिज में उदय होने लगे। भक्तिभाव के उद्रेक से अश्रुपात होने लगा। बार-बार वाणी गद्गद हो जाती, कण्ठावरोध हो जाता। कथामृत का आस्वादन कर पंडित जी का जी ही नहीं भरता। कुछ प्रसंगों को बार-बार पढ़ने को मन करता। कथा-प्रसंग उनके मानस-नेत्रों के सामने जीवन्त हो उठते।

महीनों बीत गए, पंडित जी का भागवत्-पाठ जारी रहा। अब उनके मन में राजदरबार जाने की कतई इच्छा नहीं रही। उलटे उनके मन में यह सोचकर ग्लानि होती कि मैं क्यों राजमहल के चक्कर काटता रहा।

× × ×

बहुत दिनों बाद राजा ने सोचा, 'भागवत् सुनाने वाले पंडित जी फिर कभी इधर नहीं आए। उनका पता लगाना चाहिये।'

एक दिन राजा वेश बदलकर पंडित जी के घर पहुँचा। पंडित जी आसन पर बैठे भागवत् का पाठ कर रहे थे। उनके नेत्रों से अश्रुधार प्रवाहित हो रही थी। उनको किसी के वहाँ आने और आकर बैठने का पता ही नहीं लगा।

कुछ देर बाद जब वे आसन से उठे और उन्होंने किसी को बैठे देखा तो मारे संकोच के कुछ लज्जित-से हुए।

अब राजा ने अपने-आपको छिपाने को आवश्यकता नहीं समझी। राजा ने कहा, "महाराज! कृपा करके बताइये कि आप राजपरिवार को श्रीमद्भागवत् की कथा कब सुनाएँगे?"

माया महाठगनी हम जानी

एक बार महर्षि नारद ने भगवान् विष्णु से पूछा, "महाराज! आपने गीता में कहा है कि मेरी माया का पार पाना कठिन है। आपने यह भी कहा है कि जब आप माया से अपने स्वरूप को ढक लेते हैं तो कोई

आपको पहचान नहीं पाता है। किन्तु यह आपकी माया क्या है, कैसी है, यह तो बताइये। इस माया के द्वारा ही आप अनहोनी बातों को भी कर दिखाते हैं। इस माया के दर्शन तो एक बार करवाने की कृपा करें।"

विष्णु भगवान् बोले, "क्या करोगे माया को देखकर। गीता में जहाँ मैंने यह कहा है कि मेरी माया का पार पाना कठिन है, वहीं पर यह भी कहा है कि जो मेरी शरण में आ जाते हैं, वे माया का पार पा लेते हैं। इसलिए कहता हूँ कि माया-वाया को देखने की बात छोड़ो।"

पर नारद जी हठीले बालक की तरह अड़ गए। बोले, "नहीं महाराज, मन में माया के दर्शन की बड़ी प्रबल इच्छा जाग उठी है। बस, एक झाँकी तो दिखा ही दीजिए।"

विष्णु भगवान् बोले, "तथास्तु। उचित अवसर आने पर शीघ्र ही तुम्हारी इच्छा पूर्ण करेंगे।"

एक दिन भगवान् विष्णु नारद को साथ लेकर घूमने निकले। लोक-लोकान्तरों में घूमते हुए, एक जगह भगवान् बोले, "नारद! बड़ी प्यास लग रही है। कहीं पानी मिले तो ले आओ।"

नारद तुरन्त पानी लेने चले गए। आसपास तो कहीं पानी था नहीं। नारद जी थोड़ा आगे बढ़े तो

एक नदी दिखाई दी। नदी के तट पर पहुँचे तो वहाँ एक सुन्दर युवती बैठी मिली। नारद जी उसकी ओर आकर्षित हुए। पूछने लगे, "आप कौन हैं? यहाँ निर्जन स्थान में अकेली क्यों बैठी हैं? मैं आपकी क्या सहायता करूँ?"

युवती कोयल जैसे मधुर स्वर में बोली, "महात्मन् क्या बताऊँ! मैं यहाँ पास ही रहती हूँ। मेरे माता-पिता स्वर्ग सिधार चुके हैं। भाई-बहन भी कोई नहीं है। मेरा बचपन तो माता-पिता की देखरेख में बीता। मेरी अवस्था विवाह योग्य हुई तो वे चल बसे। आप तो जानते ही हैं कि स्त्री जब कुमारी होती है तो पिता के संरक्षण में रहती है, युवती होने पर पति के और बुढ़ापे में पुत्र के। मन में आता है कि नदी में डूबकर आत्मघात कर लूं।"

नारद जी के मन में इस युवती के प्रति दया और ममता उमड़ पड़ी। बोले, "यह आप क्या कह रही हैं। आत्मघात तो महापाप है। भगवान ने आपको इतना सुन्दर रूप दिया है, कोयल जैसी मधुर वाणी दी है और शालीनता में तो आप बेजोड़ हैं ही। यौवन के द्वार पर आपने अभी पाँव रखा ही है। वह पुरुष बड़ा ही सौभाग्यशाली होगा, जिसे आप पति रूप में स्वीकार करेंगी। मैं आपके किसी काम आ सकता हूँ तो आज्ञा

कीजिये।"

नारद जी जिस काम को आए थे और जिसका काम करने आए थे, दोनों को भूल गए। इस दुखिया और अनाथ युवती का दुःख दूर करने को उनका मन बेचैन हो उठा। वे बोले, "आप भूलकर भी नदी में डूबने की बात कभी न सोचें। चलिए मैं आपको आपके घर तक छोड़ आता हूँ।"

नारद जी ने उसे उठाने के लिए उसका हाथ पकड़ लिया। तभी उनके सारे शरीर में रोमांच हो उठा। उनके मन में आया कि मैं इस हाथ को कभी न छोड़ूँ। युवती बोली, "उस सूने घर में मुझे पल-भर को भी चैन नहीं पड़ता। यदि आप मेरी कुटिया में पधारें और मुझे अतिथि-सत्कार करने का अवसर प्रदान करें तो मैं अपने को धन्य समझूँगी।"

नारद जी ने बड़ी प्रसन्नता से उसकी बात मान ली। रास्ते में बातें करते वे युवती के घर पहुँचे। युवती ने भोजन बनाया और दोनों ने भोजन किया। युवती ने नारद जी को विश्राम करने को कहा। जब नारद जी लेट गए तो वह उनके पाँव दबाने लगी। नारद जी ने कहा, "यह आप क्या कर रही हैं। मुझे कतई थकान नहीं है।"

युवती बोली, "देव! आज आपने अनायास मेरा

हाथ पकड़ा है। अब इसे कभी छोड़ियेगा नहीं। आज मुझे आपके चरणों की सेवा करने का अधिकार मिला है। आज से मैं आपकी दासी हुई और आप मेरे स्वामी। इस अबला का हाथ पकड़कर आपने मुझे सनाथ किया है। आप मेरे शरीर-मन-प्राण के स्वामी हुए। मैं यहाँ अकेली असहाय और असुरक्षित थी। आप मेरे सहायक, स्वामी और सखा बने।"

नारद जी को अमृत-सनी उसकी बातें बहुत ही मीठी लग रही थीं। उनकी भटकन समाप्त हुई और वे वहीं डेरा डालकर बैठ गए। वे विवाह-बन्धन में बँधकर बड़े मजे से वहाँ रहने लगे। नारद जी को बाल-बेल बढ़ने लगी। घर-आँगन बाल-गोपालों की किलकारियों से गूँजने लगा। मधुर सपने की तरह वर्ष-पर-वर्ष बीतते गए और नारद जी आपा भूले, पत्नी-पुत्रों के मोह से ग्रस्त, रूप-रस-गन्ध-शब्द-स्पर्श के प्रपंच में फँसते गए।

इसी तरह बहुत वर्ष बीत गए। कुछ समय बाद उस इलाके में महामारी फैल गई। लोग धड़ाधड़ मरने लगे। नारद जी ने पत्नी के साथ सलाह करके, उस स्थान को छोड़कर कहीं दूर जाने का निश्चय किया। छोटे बच्चे को स्त्री ने गोद में उठाया और उससे बड़े को नारद जी ने अपने कन्धे पर बिठाया। तीसरे को

उँगली नारद जी ने पकड़ी और घर-गाँव छोड़कर चलने लगे।

चलते-चलते रास्ते में नदी आई। नदी का पाट बहुत चौड़ा था। वे नदी को पार कर ही रहे थे कि ऊपर से बाढ़ के पानी का रेला आ गया। एक के बाद एक तीनों बच्चे बाढ़ में बह गए। अब नारद जी ने पत्नी का हाथ कसकर पकड़ लिया और रोते-पीटते नदी पार करने लगे। बच्चों के बिछोह में पत्नी प्राण देना चाहती थी किन्तु नारद जी उसका हाथ कसकर पकड़े हुए थे। पत्नी कह रही थी कि मुझे छोड़ दीजिए और मरने दीजिए।

नारद जी बोले, "प्रिये! तुम्हीं ने कहा था कि आज आपने मेरा हाथ पकड़ा है, अब इसे जीवन-भर कभी न छोड़ना। फिर तुम्हीं बताओ मैं तुम्हारा हाथ कैसे छोड़ दूँ।"

पानी का जोर बढ़ रहा था और नारद जी को पत्नी को सम्भालते हुए पार जाना कठिन हो रहा था। इतने में पानी का एक रेला आया और पत्नी के पाँव उखड़ गए। नारद जी सम्भाल नहीं सके। हाथ छूट गया और किनारे के पास आकर पत्नी भी बाढ़ में बह गई। अब नारद जी अकेले रह गए। वे दहाड़ मारकर रोने लगे। उनका जी किया कि जिस नदी में तीन पुत्र

और पत्नी गई मैं भी उसी में अपने को विसर्जित कर दूँ पर इतने में क्या हुआ कि किनारे से आवाज आई, "नारद ! क्या हुआ, तुम रो क्यों रहे हो ! पानी कहाँ है ?"

भगवान् की वाणी सुनकर नारद जी ने उधर देखा तो भगवान् से साक्षात्कार हुआ ।

निद्रा से हड़बड़ाकर जागे हुए व्यक्ति की तरह क्षण-भर को तो नारद जी की समझ में कुछ नहीं आया कि मामला क्या है । वे हक्के-बक्के से रह गए । उनका आगे का साँस आगे और पीछे का साँस पीछे रह गया ।

तभी भगवान् ने अपनी वैष्णवी माया को समेट लिया । अब तो सारी बात नारद जी की समझ में आ गई ।

उन्होंने दोनों हाथ जोड़कर बड़े भक्तिभाव से भगवान् को प्रणाम करते हुए कहा, "प्रभो ! तुम्हें प्रणाम और तुम्हारी माया को भी प्रणाम !"

धन से भरे सात घड़े

एक नाई था । वह राजा की नौकरी करता था । अपनी छोटी-सी गृहस्थी में वह बड़े मजे से रहता था । उसे हर महीने राजा से वेतन मिल जाता और कभी-

कभी इनाम भी। अपनी बिरादरी के दूसरे नाइयों से उसकी हालत अच्छी ही थी। पर नाई जब महलों में रानियों को गहनों-कपड़ों से लदा देखता तो उसके मन में आता, 'अगर मेरे पास धन होता तो मैं भी अपनी नाइन को गहनों-कपड़ों से सजाकर रानी-जैसा बना देता। यों वह उसको घर में 'रानी' ही कहता था और नाइन पति को 'राजा' कहती थी।

नाइन भी रानियों के केश सँवारने तथा शृंगार करने के लिए कभी-कभी महलों में जाती थी। वह भी रानियों के गहनों को देखती तो उसका भी जी करता कि उसके पास भी गहने होने चाहिए। ज्यादा नहीं, तो भी हाथों में कंगन, गले में सतलड़ा हार, कानों में झुमके और नाक में हीरे की लौंग तो होनी ही चाहिए।

एक दिन अकेले में नाइन नाई से बोली, "मेरे दिल के राजा! तुम राजा के नाई हो और मुझे रानी कहकर पुकारते हो। पर तुम्हारी इस दिल की रानी के पास एक छल्ला भी तो नहीं है। नाक की तीली भी नहीं है। कितने दिन हो गये तुम्हें कहते-कहते।"

नाई बोला, "भागवान! जो कुछ मिलता है, लाकर तुम्हारे पास दे देता हूँ। अब तुम जानो और तुम्हारा काम जाने। थोड़ा-थोड़ा बचाया करो तो देर-

सवेर बन भी सकता है।"

× × ×

कुछ समय बाद नाई कहीं जा रहा था। रास्ते में जंगल पड़ता था। वह जंगल में एक बरगद के पेड़ के नीचे सुस्ताने बैठ गया। वह सोचने लगा कि अपनी नाइन के लिए गहने कैसे बनवाए। थोड़ी देर बाद उसके कान में आवाज आई, "धन से भरे सात घड़े लोगे ?"

नाई ने सावधान होकर देखा, आस-पास कोई नहीं था। उसे लगा कि शायद उसे भ्रम हुआ है। पर थोड़ी देर बाद फिर वही आवाज आई, "धन से भरे सात घड़े लोगे ?"

नाई को थोड़ा डर लगा। आवाज सुनाई देती है किन्तु दिखता कोई नहीं। क्या मालूम कोई भूत-प्रेत हो। फिर उसने सोचा कि जब पुरुष का भाग्य जागता है तो ऐसे ही जागता है। कहते हैं न कि खुदा जब देता है तो छप्पर फाड़कर देता है। उसने सोचा, डरने से काम नहीं चलेगा। मर्द हूँ, मुझे हिम्मत से काम लेना चाहिए। उसने सुन रखा था कि लोहे का तीखा औजार पास होने पर भूत का डर नहीं रहता। उस्तरा और लोहे के दूसरे औजार उसके पास थे ही। उसे हिम्मत बँधी।

तीसरी बार फिर आवाज आई, "धन से भरे सात घड़े लोगे ?"

नाई ने हिम्मत करके जवाब दिया, "हाँ, लूँगा।"

फिर आवाज आई, "जा, घर लौट जा। तुम्हारी भीतर वाली कोठरी में तुम्हें धन से भरे सात घड़े रखे हुए मिलेंगे।"

नाई आगे न जाकर, वापस घर की ओर लौट पड़ा। घर पहुँचकर वह सीधा भीतर वाली कोठरी में पहुँचा। उसने जो कुछ सुना था, वह सच सिद्ध हुआ। सातों घड़ों में धन भरा हुआ था। छः घड़े तो ऊपर तक लबालब भरे हुए थे। सातवाँ थोड़ा खाली था।

उसने आवाज देकर नाइन को बुलाया और धन से भरे घड़े दिखाए। फिर उसने जंगल में घटी घटना कह सुनाई।

धन से भरे घड़ों को देखकर दोनों बहुत प्रसन्न थे। नाइन मन में गहने बनवाने की योजना बनाने लगी। हार कैसा होगा, कंगन कैसे होंगे और लौंग में जड़े हीरे की कनी की चमक कैसी होगी। अँगूठी में जड़ा नग और झुमकों में लगे सुच्चे मोतियों की दमक —सभी कुछ उसे मन की आँखों से साफ दिखाई दे रहा था। अब बहुत जल्दी उसके ठाठ-बाट रानियों से जरा भी कम नहीं होंगे।

पर नाई के मन में दूसरी ही बात थी। एक तो घड़ों को जमीन में गाड़कर रखना होगा जिससे किसी को कुछ पता न चले। दूसरे, यह जो सातवाँ घड़ा थोड़ा खाली है, अगर इसे भी ऊपर तक भर दिया जाए तो पूरे सात हो जाएँगे।

उसने अपनी पत्नी को अपनी सारी योजना बताई। नाइन बोली कि तुम्हारी बात ठीक है पर इसे भरें कैसे ?

नाई बोला, "अभी तो तुम्हारे पास बचत का जो भी रुपया-पैसा है, उसे इसमें डाल दो। और फिर आज से घर-खर्च में थोड़ी कंजूसी करना शुरू करो। मैं भी अब दिन दूनी और रात चौगुनी मेहनत करूँगा और जो कमाऊँगा, उसे इसमें डालता जाऊँगा। पूरे सात घड़े धन जब तक नहीं हो जाएँगे, चैन से नहीं बैठूँगा। बोलो क्या कहती हो ?"

नाइन बोली, "बात तो तुम्हारी ठीक ही है। बूँद-बूँद से घड़ा भरता है। यह लो मेरे पास बचत के थोड़े-से रुपये हैं। इन्हें इसमें डाल देती हूँ। हाँ, याद आई। मेरे पास थोड़े-से चाँदी के गहने हैं। इन्हें भी इसमें डाल देते हैं।"

उनके पास जो कुछ था, वह उन्होंने घड़े में डाल दिया। फिर भी घड़ा भरा नहीं। आज पहला ही

दिन तो था। धीरे-धीरे सब हो जाएगा। यह सोचकर घर-खर्च कम करने का उपाय दोनों सोचने लगे।

नाई ने सुझाव दिया, "पड़ोस वालों के यहाँ भैंस ब्याई हुई है। उनसे छाछ माँगकर ले आया करो। इस तरह दाल-सब्जी खरीदने की जरूरत नहीं रहेगी। वे भले लोग हैं, तुम्हें मना नहीं करेंगे। और सुनो, भूख रखकर खाना बहुत अच्छा होता है। वैद्य लोग तो सदा यही सलाह देते हैं। बासी रोटी न बचे, इसलिए आटा थोड़ा कम गूँधा करो। घर में माँगने वाले चले ही रहते हैं। इन लोगों को मुँह लगाने की जरूरत नहीं। एक और उपाय बताता हूँ। तुम कुछ महीनों के लिए मायके चली जाना। मेरा क्या है, मैं तो महलों में ही खा लिया करूँगा। और राजा जी से कहूँगा कि महाराज! गुजारा नहीं होता, मेरा वेतन कुछ बढ़ा दीजिए। इस तरह जल्दी ही सातवाँ घड़ा भी पूरा भर जाएगा।"

नाइन कुछ दिनों बाद मायके चली गई। नाई के कहने से राजा ने उसका वेतन भी बढ़ा दिया। पर नाई दिनों-दिन दुबला होता चला गया। अब वह जो कुछ कमाता, उस सातवें घड़े में डाल देता। उसने अपने घर में खाना बनाना भी बन्द कर दिया। जिसके यहाँ काम करने जाता, उसी से माँगकर खा लेता।

कभी भूखा रहना पड़ता तो भूखा रह जाता। पर इतना करने पर भी घड़ा भरने में नहीं आता था।

नाई का चेहरा सूख गया। छः महीने के अन्दर बीमार जैसी उसकी हालत हो गई। हड्डियों का ढाँचा-मात्र उसका शरीर हो गया।

एक दिन राजा ने जब उसकी दिनों-दिन बिगड़ती हालत देखी तो पूछा, "क्यों रे! तुझे क्या हो गया है। मैंने तेरा वेतन भी बढ़ा दिया, फिर भी तू मरियल-सा क्यों हो रहा है। वेतन बढ़ने से पहले तो तू अच्छा-भला था। तब तेरा गुजारा कैसे होता था? अरे पगले! कहीं तू सात घड़े धन तो नहीं पा गया है?"

यह प्रश्न सुना तो नाई हक्का-बक्का रह गया। बोला, "महाराज! आपको सात घड़ों की बात किसने बताई?"

राजा सब समझ गया। बोला, "वह तो यक्ष का धन है। एक बार यक्ष ने मुझे भी उन घड़ों को देने की बात की थी। तब मैंने उससे पूछा था, "जो धन तुम दे रहे हो, वह खाने-खर्चने के लिए है या जोड़ने-बढ़ाने के लिए। बस, फिर क्या था। यक्ष चुप्पी साध गया। मैंने पहले ही सुन रखा था कि वह धन कभी नहीं लेना चाहिए। उसे खर्च नहीं किया जा सकता। वह सातवाँ घड़ा पूरा भरा नहीं होता। जिसे वह धन

मिलता है उसके मन में यह लालसा पैदा होती है कि यह घड़ा भी पूरा भर जाए तो पूरे सात हो जाएँ पर वह घड़ा कभी भरता ही नहीं। आदमी खुट-खुटकर बेहाल हो जाता है कि किसी तरह घड़ा भर जाए पर वह कभी नहीं भरता। तू अपना भला चाहता है तो उन घड़ों को वापस कर दे।"

नाई ने पूछा, "महाराज! लौटाऊँ कैसे? मैंने किसी को देखा तो था नहीं, बस आवाज भर सुनी थी। घड़े तो वह चुपचाप घर में ही रख गया था। उसे किसी ने आता-जाता भी नहीं देखा।"

"तुम ठीक कहते हो। इसका उपाय यह है कि उस वृक्ष के नीचे जाओ, जहाँ तुमने आवाज सुनी थी। वहाँ जाकर कहो कि मुझे धन से भरे तुम्हारे सात घड़े नहीं चाहिए।"

तब नाई को समझ आई। वह सीधा उस वृक्ष के नीचे पहुँचा और चिल्लाकर बोला, "मुझे नहीं चाहिए तुम्हारे ये सात घड़े। इन्हें वापस ले जाओ।"

घर लौटकर नाई ने देखा तो घड़े गायब थे। इतने दिनों तक नाई ने जो कुछ बचाकर घड़े में डाला था, वह सब भी चला गया। दुःख भोगा, वह अलग।

अब नाई ससुराल जाकर अपनी पत्नी को वापस ले आया और वे पहले ही की तरह मजे में रहने लगे।

लंगोटी की करामात

गाँव के बाहर, शिवालय की बगीची में दो साधु रहते थे। बूढ़ा साधु युवा साधु का गुरु था। युवा साधु अपने गुरु की खूब सेवा करता। उनसे ज्ञान की बातें सीखता और गुरु-शिष्य भगवान् का भजन करते हुए मस्त रहते।

गुरु जी के मन में तीर्थयात्रा करने का विचार आया। उन्होंने चेले को पास बिठाकर कहा, "मैं कुछ दिनों के लिए तीर्थयात्रा को जाऊँगा। तुम यहीं रहोगे। मेरे पीछे भजन-पूजन में आलस नहीं करना। स्वाध्याय नियम से करते रहना। अतिथि-अभ्यास की यथाशक्ति सेवा करना। तप ही साधुओं की सम्पत्ति होती है। तप से प्रमाद मत करना।"

शिष्य ने ध्यान से गुरु की बातें सुनीं और उनकी आज्ञा के अनुसार चलने का अपना निश्चय प्रकट किया।

ज्ञानी गुरु तीर्थयात्रा के लिए निकल पड़े। उनके पास सामान तो कुछ था नहीं। रमते राम जहाँ रात हो जाती किसी मन्दिर में, किसी साधु की कुटिया में या किसी धर्मशाला में टिक जाते। कभी किसी वृक्ष के नीचे ही रात काट लेते।

इधर युवा शिष्य प्रातः जल्दी उठ जाता। नित्य-कर्म से निबटकर कुटिया को बुहारता-लीपता, क्यारियों को सींचता और दोपहर तक ध्यान-भजन में मग्न-मस्त रहता।

दोपहर को भिक्षाटन के लिए जाता और मधुकरी माँग लाता। फिर भिक्षान्न को पाता और विश्राम करता। कभी कोई रमता जोगी आता तो उसे खिला-कर तब स्वयं खाता।

एक दिन इस युवा साधु ने अपनी लंगोटी धोई और सूखने डाल दी। वह स्वयं भिक्षा माँगने चला गया। जब वह लौटकर आया तो देखा कि चूहों ने लंगोटी को कई जगह से कुतर दिया है।

लंगोटी बाँधने के योग्य नहीं रही थी। बेकार हो गई थी।

दूसरे दिन यह साधु जब भिक्षा माँगने गया तो एक घर की मालकिन जब भिक्षा देने आई तो साधु ने कहा, "अम्मा! कोई कपड़े का टुकड़ा घर में पड़ा हो तो मुझे दो। मुझे एक लंगोटी बनानी है।"

बुढ़िया घर के भीतर से कपड़ा ढूँढ लाई और साधु को दे दिया।

साधु कपड़ा लेकर प्रसन्न मन कुटिया पर वापस आया।

फिर एक दिन जब उसने लंगोटी धोकर सूखने रखी और भिक्षा के लिए गया तो चूहों ने उसे भी कुतर डाला। रोज-रोज के चूहों के उपद्रव से कैसे बचा जाए, साधु महाराज सोचने लगे।

आखिर उन्हें एक उपाय सूझा ! अगर एक बिल्ली पाल ली जाए तो चूहे भाग जाएँगे। वे गाँव से एक बिल्ली ले आए।

बिल्ली ने कुछ चूहे तो मार खाए और कुछ भाग गये। साधु को अब चूहों का डर नहीं रहा। समस्या टल गई। पर एक नई समस्या पैदा हो गई। बिल्ली को दूध चाहिए। रोज-रोज दूध कौन देगा। दूध के बिना बिल्ली का काम चलेगा नहीं।

बिल्ली का होना जरूरी था और बिल्ली के लिए दूध जरूरी था। बहुत सोच-विचार कर साधु महाराज एक गाय ले आए। गाय आ गई तो दूध की समस्या भी हल हो गई।

गाय के लिए घास की जरूरत थी, भूसे की जरूरत थी।

इसका भी उपाय खोज निकाला गया। कुटिया के साथ लगी जमीन यों ही पड़ी थी। अगर इसमें गेहूँ बोते जाएँ तो अनाज भी हो जाएगा और चारा भी।

साधु गाय की सेवा करता। खेती-बाड़ी की देख-

भाल करता और बिल्ली का भी ख्याल रखता।

वह तो सबका ख्याल रखता पर उसका ख्याल रखने वाला कोई नहीं था। गुरुजी थे, वे गये तो लौटकर नहीं आए। कौन जाने किधर निकल गये; कहां धूनी रमाकर बैठ गये। किस गुफा में समाधि लगाए बैठे हैं।

साधु महाराज का भजन और ध्यान तो जैसे एकदम छूट ही गया। फुर्सत ही कहां मिलती है। गाय के लिए चारा-पानी चाहिए। गोबर भी साफ करना होता है। दूहने-बिलोने का काम अलग। खेती तो हर समय देख-भाल चाहती है। निराई-गुड़ाई, उजाड़ने वाले जानवरों से बचाव, काटने और सँभालने का काम। बरसात से भूसे और अनाज की रक्षा। सब काम हो जाने पर भजन करने को समय नहीं मिलता।

युवा साधु ने सोचा, "भजन करने का अवकाश नहीं मिलता। मैं तो दूसरे धन्धों में ही उलझा रहता हूँ। यह तो ठीक नहीं है। अगर एक नौकरानी रख ली जाए तो ठीक होगा। गाय-बछड़े की देख-रेख वह कर लेगी। गोबर उठाने, दूध दूहने, दही बिलोने का काम भी उसी के जिम्मे रहेगा। थोड़ा-बहुत खेती-बाड़ी का काम भी कर लिया करेगी। अनाज कूटने-पीसने का काम तो वह करेगी। फिर तो मुझे भजन के लिए अवकाश और अवसर मिला करेगा।

वह साधु एक दासी ले आया।

अब दासी भी वहीं रहने लगी। उनका परिचय बढ़ता गया और दासी साधु की पत्नी बन गई। उनके कई बच्चे भी हो गये। पूरी गृहस्थी बस गई।

× × ×

कई वर्षों के बाद बूढ़े गुरुजी तीर्थयात्रा से लौटकर, अपनी पुरानी कुटिया में लौटे। पर वह कुटिया उन्हें दिखाई नहीं दी। कुटिया की जगह अच्छा मकान बना हुआ था।

बूढ़े गुरुजी ने सोचा, 'कहीं मुझसे भूल तो नहीं हुई। मैं कई वर्षों बाद आया हूँ। शायद रास्ता भूल गया हूँ।'

तभी उस मकान से एक आदमी निकला। गुरुजी ने उससे पूछा, "क्यों जी, यहाँ एक साधु रहता था। बता सकते हो अब वह कहाँ है?"

शिष्य ने गुरुजी को पहचान लिया और उनके पैरों पर गिर पड़ा। बोला, "गुरुजी, मैं ही वह साधु हूँ।"

गुरुजी ने आँखें मलकर देखा। उन्हें अपनी आँखों पर विश्वास नहीं हो रहा था। वह जिस ब्रह्मचारी को इस कुटिया में छोड़ गये थे, वह तो पूरा गृहस्थ बन चुका था।

दोनों—गुरु-शिष्य को बात करते सुनकर भीतर से

उसकी पत्नी भी बाहर आ गई थी। वह आश्चर्य से इन बूढ़े साधु महाराज के आगे हाथ जोड़े खड़े अपने पति को देख रही थी।

गुरुजी बोले, "बेटा, मैं क्या देख रहा हूँ। तुम तो एकदम बदल गये हो। तुमने साधु का सादा जीवन छोड़कर यह क्या किया ?"

इतने में घर के भीतर से बच्चे भी बाहर आ गए और साधु की लम्बी दाढ़ी को देखकर डर गये।

शिष्य बोला, "गुरुदेव ! क्या बताऊँ ! यह सब लंगोटी की माया है। एक लंगोटी को चूहों से बचाने के लिए मुझे बिल्ली पालनी पड़ी। फिर बिल्ली के दूध के लिए गाय और गाय की सेवा के लिए नौकरानी रखनी पड़ी। वही मेरी पत्नी बन गई और उसी से ये बच्चे हैं।

मुझे क्या मालूम था कि छोटी-सी समस्या को सुलझाते हुए, मैं बड़ी समस्या में उलझता चला जाऊँगा।"

ज्ञानी गुरु बोले, "यही होता है ! कुछ से कुछ हो जाता है। आदमी जरा-सा फिसले तो फिर फिसलता ही चला जाता है। यही तो माया है। तभी तो सन्तों ने कहा है कि—

'माया महाठगनी हम जानी।'"

गहरे पानी पैठ

एक आदमी ने गाँव से बाहर घर बनाया। घर तो बना लिया पर पानी गाँव के कुएँ से ही लाना पड़ता था। पानी ढोते-ढोते घर के लोग थक जाते। उन्होंने निश्चय किया कि घर के पास कुआँ खोदा जाए।

सोच-विचार कर कुआँ खोदने के लिए जगह तय की गई। अनुमान था कि यहाँ जल्दी ही पानी निकल आएगा।

कुआँ खोदने का काम शुरू हुआ। दस हाथ खोदा, पर पानी नहीं निकला। फिर सोचा कि बीस हाथ गहरा खोदने से पानी जरूर निकल आएगा।

दोबारा काम शुरू किया। कुआँ बीस हाथ गहरा हो गया पर पानी फिर भी नहीं निकला। बड़ी निराशा हुई। हार मानकर कुदाल-फावड़े एक ओर रख दिए।

इतने में एक पंडित जी उधर से निकले। कुआँ खोदने वाले की निराशा भाँपकर बोले, "भले आदमी, काम शुरू करने से पहले क्यों नहीं पूछा। जगह की परीक्षा करके और मुहूर्त देखकर मैं तुम्हें बता सकता था कि कहाँ खोदना चाहिए। खैर, अब भी कुछ नहीं बिगड़ा है। मेरे बताए स्थान पर, मुहूर्त के अनुसार

काम शुरू करो। फिर तुम्हें ज्यादा गहरा नहीं खोदना पड़ेगा। थोड़े ही परिश्रम से शीतल और मीठे पानी का कुआँ तैयार हो जाएगा।"

उस आदमी ने सोचा कि पंडित जी गुणी आदमी हैं। इनकी बात मान लेनी चाहिए। उसने दूसरी जगह, जहाँ पंडित जी ने भूमि-परीक्षा करके बताया था, कुआँ खोदना शुरू किया।

दस हाथ गहरा खोदा पानी नहीं निकला। फिर पन्द्रह हाथ और फिर बीस हाथ तक गहरा खोद डाला पर पानी फिर भी नहीं निकला। फिर पच्चीस हाथ, पर पानी फिर भी नहीं।

खोदने वाले थकान से चकनाचूर हो गये। निराशा ने उन्हें और भी कमजोर कर दिया। उनकी समझ में कुछ नहीं आ रहा था कि क्या करें और क्या न करें।

थोड़ी ही देर में वहाँ गाँव का मुखिया आ निकला। उसने दो जगह कुआँ खुदा देखा। खोदने वालों के चेहरे उदास और निराश देखकर उसने कारण पूछा।

वह आदमी बोला, "हमने पहले उस जगह कुआँ खोदना शुरू किया था, पर बीस हाथ गहरा खोदने पर भी जब पानी नहीं निकला तो एक पंडित जी आए। उन्होंने भूमि की परीक्षा करके और मुहूर्त देखकर इस

दूसरी जगह कुआं खोदने को कहा। यहां भी हम बीस हाथ गहरा खोद चुके पर पानी नहीं निकला। आप ही बताइए कि अब क्या करें।"

मुखिया बोला, "हमारे अनुभव का लाभ उठाओ। हमने कई कुएं खुदवाए हैं और हर जगह पानी निकला है। बात यह है कि धरती में नीचे जिस जगह पानी होता है, उसके ऊपर की धरती पर घास और वनस्पति में ज्यादा हरियाबल होती है। अरे भई, मोटी-सी बात है। जहां नीचे पानी होगा, वहां उसकी नमी का प्रभाव धरती के ऊपर की वनस्पति पर जरूर पड़ेगा। जरा उठो, यहां आस-पास देखें कि कहां पर नमी का प्रभाव है।"

वे दोनों उठे और देखने लगे तो एक जगह उन्हें नमी मालूम पड़ी। वहां की घास भी हरी-भरी थी। पास ही वृक्षों का एक झुरमुट था। वहां उन्हें एक मेंढकी भी दिखाई दी। इसे बहुत शुभ लक्षण माना गया।

मुखिया ने कहा, "यह रही वह जगह, जहां पानी निकल सकता है। तुम भी देख रहे हो कि धरती के नीचे पानी होने के सारे लक्षण यहां मौजूद हैं। भगवान् का नाम लेकर यहां खोदना शुरू करो। तुम्हें ज्यादा मेहनत नहीं करनी पड़ेगी। अच्छा राम-राम।"

अब तीसरी जगह कुआं खोदने का काम शुरू

हुआ। खोदते जाते और नापते भी जाते। दस हाथ खोदा पर पानी का कहीं नाम नहीं। फिर पन्द्रह पर पानी के दर्शन नहीं। फिर बीस, पर पानी फिर भी नहीं। मिट्टी में थोड़ी-सी नमी मालूम पड़ी। कुछ आशा बँधी। फिर जोर मारा। गहराई पच्चीस हाथ हो गई। खोदने वाले पसीने से तरबतर हो गये। उत्साह ठण्डा पड़ने लगा। किसी तरह मन मारकर पाँच हाथ और खोद डाला। पर पानी नहीं निकला, नहीं निकला।

सारी मेहनत व्यर्थ गई। पल्ले कुछ नहीं पड़ा। घर के पास तीन गहरे गड्ढे बन गये। अगर इन्हें भरा नहीं तो इन अन्धे कुओं में कोई गिर-गिरा जाएगा। नई मुसीबत आएगी। खेत की फसल तो बरबाद हुई ही, खेत भी खराब होगा। मिट्टी के ऊँचे-ऊँचे तीन ढेर लग गये। पानी निकलता, कुआँ पक्का बनता तो कुएँ की मिट्टी कुएँ में ही लग जाती। अब क्या किया जाए।

इतने में उस आदमी का एक मित्र वहाँ आ निकला। तीनों ताजे खुदे गड्ढे उसने देखे। फिर कुआँ खोदे जाने की सारी कहानी सुनी।

आने वाला मित्र बोला, "दोस्त, मुझे तुम्हारी अकल पर तरस आ रहा है। भले आदमी, कुछ अपनी अकल से भी काम लिया होता। कुल पिचहत्तर हाथ

गहरी खुदाई तो तुमने की, पर की तीन जगह। इतनी मेहनत एक ही जगह करते तो फिर चाहे कैसी ही जगह होती, पानी जरूर निकल आता। न किसी ज्योतिषी से पूछने की जरूरत थी, न मुखिया से। जरूरत थी तो बस, एक ही जगह गहरा खोदने की।"

मित्र की बात और अपनी भूल उस आदमी की समझ में आ गई। उसने निश्चय किया कि जहाँ मैंने तीस हाथ गहरा खोदा है, उसी जगह और गहरा खोदूँगा।

दाता एक राम
भिखारी सारी दुनिया

यह घटना उन दिनों की है, जब अकबर बादशाह था। राजधानी से कुछ दूर जंगल में एक मस्त फकीर रहता था। धीरे-धीरे उसकी प्रसिद्धि दूर-दूर तक फैलती गई। तरह-तरह के दुःखों के सताए लोग उनका आशीर्वाद लेने आते। वे जो कुछ फल-फूल ले आते, साईंबाबा उन्हीं में बाँट देते।

लोगों की भीड़ बढ़ने लगी। कोई भोजन के समय आता। कोई कभी देर होने पर रात को ठहर जाता। पर उन्हें खिलाने के लिए साईंबाबा के पास कुछ नहीं होता।

साईंबाबा को लगता कि आने वालों के भोजन का कुछ प्रबन्ध होना ही चाहिए। लोग मेरे पास आते हैं तो यह मेरी जिम्मेदारी हो जाती है कि मैं उनके भोजन की व्यवस्था करूँ। पर साईंबाबा के पास रुपया-पैसा तो था नहीं।

साईंबाबा ने सोचा कि अगर मैं बादशाह अकबर के पास जाऊँ तो कुछ बात बन सकती है। रात को ठहरने वालों के लिए एक कमरा और कुछ खाने-पीने का सामान जुटाया जा सकता है। साईंबाबा ने सुन रखा था कि बादशाह अकबर का दरबार साधु-सन्तों और फकीरों के लिए सदा खुला रहता है। इस बात से उनका उत्साह बढ़ा और वे बादशाह अकबर के पास चल पड़े।

राजधानी पहुँचकर वे शाही महल की ड्योढ़ी पर पहुँचे। दरबान को बताया कि वह बादशाह के पास जाना चाहते हैं।

दरबान ने सिर झुकाकर सलाम किया और भीतर जाने के लिए इशारा किया।

भीतर जाकर अगली ड्योढ़ी में फिर दरबान मिला तो साईंबाबा ने बादशाह से मिलने की बात कही।

दरबान ने आदर और सम्मान के साथ साईंबाबा

को बताया कि इस समय बादशाह सलामत पूजा कर रहे हैं। आप पूजा-घर में जाकर बैठ सकते हैं। जब वे पूजा-बन्दगी से उठें तो अपनी बात उन्हें बता दें।

साईंबाबा चुपचाप एक ओर बैठ गये। बादशाह खुदा से दुआएँ माँग रहा था।

साईंबाबा एक ओर बैठे सब-कुछ सुन रहे थे। बादशाह कह रहा था, "ऐ खुदा, तू रहीम है, तू करीम है। तू भक्तों की मुरादें पूरी करता है। ऐ अल्लातालां, मैं भी तेरा एक अदना-सा भक्त हूँ। मेरा राज्य फले-फूले। मेरे दुश्मन बरबाद हो जाएँ। मेरे खजाने भरे रहें।"

साईंबाबा ने यह सुना तो उल्टे पाँव लौटने लगे।

इतने में बादशाह की दुआ पूरी हुई। उसने देखा कि दरवाजे से कोई फकीर वापस जा रहा है। अकबर ने उसे रोका और आकर चुपचाप वापस जाने का कारण पूछा।

फकीर ने कहा, "अब उस बात को छोड़िए। मैं एक उद्देश्य से आपके पास आया था। पर यहाँ आकर मेरा विचार बदल गया और वापस जा रहा हूँ।"

बादशाह के बहुत जोर देने पर फकीर ने बताया कि मैं अपने यहाँ आने वाले लोगों के लिए एक कमरा बनवाना चाहता था ताकि वे रात को उसमें ठहर सकें

और थोड़ा-सा धन भी इसलिए चाहता था कि उनके खाने-पीने का बन्दोबस्त कर सकूँ।

बादशाह ने कहा, "यह तो बहुत अच्छी बात है। लेकिन आप वापस क्यों जा रहे थे ?"

फकीर बोला, "मैं वापस इसलिए जा रहा था कि मैंने यहाँ आपको भी कुछ माँगते देखा-सुना। तब मैंने सोचा कि जो खुद भी भिखारी है, मैं उससे क्यों माँगूं। मैंने आपको दुआ करते सुना कि आप खुदा से धन-दौलत माँग रहे हैं। मैंने सोचा, जिससे बादशाह माँग रहा है मैं भी उसी से माँग लूंगा।"

मीठा-मीठा गप्प

एक ब्राह्मण ने बाग लगाया। वह जब देखो तब बाग की देखभाल में लगा रहता। उसने एक-से-एक बढ़िया फलदार वृक्ष वहाँ लगाए। उसे हर पौधे से प्यार था। बच्चों की तरह वह उन्हें यत्न से पालता।

एक दिन एक गाय बाग में आ घुसी। वह बड़े यत्न से पाले उन पौधों को खाने लगी। कितने ही छोटे-छोटे पौधे उसने खा डाले।

कठिन परिश्रम से पाले हुए पौधों का गाय द्वारा किया गया विनाश देखकर, ब्राह्मण को बड़ा क्रोध

आया। वह लाल-लाल आँखें किये लाठी लेकर गाय के पीछे दौड़ा।

चारों ओर ऊँची बाड़ लगी होने के कारण गाय को बाहर निकलने का रास्ता नहीं मिल रहा था। उधर ब्राह्मण उसकी पीठ पर लगातार लाठियाँ बरसा रहा था। वह पूँछ उठाकर भाग रही थी पर निकल भागने का कोई रास्ता नहीं सूझ रहा था। जिस फाटक से वह भीतर घुस आई थी, वह कहीं दूर रह गया था। उधर गुस्से में भरा बाग का मालिक अन्धाधुन्ध लाठियाँ बरसा रहा था।

गाय दौड़-दौड़कर हाँफ रही थी। उसका मल-मूत्र भी निकल गया था। पर ब्राह्मण को जरा भी तरस नहीं आ रहा था। लगता था कि वह गाय को अधमरी करके छोड़ेगा।

अन्त में गाय दौड़-भागकर और लाठियों की मार खाकर निढाल हो गई। वह धड़ाम से एक जगह गिर पड़ी। पर ब्राह्मण ने उस गिर पड़ी गाय को पीटना जारी रखा।

गाय ने वहीं दम तोड़ दिया। गाय के मरने की खबर तुरन्त सारे गाँव में पहुँच गई। ब्राह्मण को गो-हत्यारा ठहराया गया। गोहत्या बड़ा भारी पाप माना जाता है। गोघातक के हाथ का छुआ पानी भी कोई

नहीं पीता है। गोहत्या महापातक माना जाता है।

ब्राह्मण ने बड़ी चालाकी से अपना कसूर मानने से इन्कार कर दिया। वह बोला, "मेरे हाथ की लाठी से गाय मरी है, यह सच है। इसलिए 'हाथ दोषी है। और शास्त्रों में लिखा है कि 'हाथ का अधिष्ठाता देवता इन्द्र है', इसलिए गोहत्या का पाप मुझे नहीं, इन्द्र को लगेगा।"

इन्द्र देवता ने सुना कि ब्राह्मण बड़ी चालाकी से अपना पाप मेरे माथे मढ़ना चाहता है।

इन्द्र ने इस ढोंगी ब्राह्मण को पाठ पढ़ाने का उपाय सोच निकाला। इन्द्रदेव ने ब्राह्मण का भेस बनाया और ब्राह्मण के आगे में प्रकट हो गए।

फाटक के पास बाग का मालिक ब्राह्मण मिला। ब्राह्मण बने इन्द्र ने पूछा, "इस बाग का स्वामी कौन है?"

ब्राह्मण बोला, "यह बाग मेरा है। मैं ही इसका स्वामी हूँ।"

ब्राह्मण वेशधारी इन्द्र ने कहा, "बड़ा सुन्दर बाग है। आपका माली बड़ा चतुर मालूम देता है। बड़ा मेहनती भी है। हर पेड़-पौधा कायदे से लगाया गया है। सफाई भी खूब है।"

ब्राह्मण बोला, "यह सब काम मैंने अपने हाथों से

किया है।"

ब्राह्मण वेशधारी इन्द्र ने कहा, "यह रास्ता भी एक जैसा चौड़ा और सीधा भीतर तक चला गया है। सभी पौधों तक पानी पहुँचाने के लिए नालियाँ भी बनी हुई हैं। हर चीज एकदम चुस्त और दुरुस्त है।"

ब्राह्मण बोला, "अजी यह सब मेरे ही हाथों का काम है। इस बाग की चप्पा-चप्पा धरती को मैंने अपने हाथों सँवारा है।"

ब्राह्मण वेशधारी इन्द्र ने कहा, "सभी अच्छे काम आपके हाथों हुए। ठीक है न। तो क्या इस गाय को मारते समय ही इन्द्र देवता आए थे?"

ब्राह्मण चुप! उसका झूठ पकड़ा गया था।

जैसी दृष्टि वैसी सृष्टि

एक दिन गर्मियों की दोपहरी में, थका हुआ एक पथिक एक छायादार वृक्ष के नीचे सुस्ताने बैठा। उसने वृक्ष के तने के साथ पीठ लगाकर टाँगें पसार दीं। वृक्ष की शीतल छाया तो उसे बहुत अच्छी लगी पर ऊबड़-खाबड़ जमीन पर ठीक से पसरा नहीं जाता था।

उसने सोचा, 'अगर यहाँ पलंग-बिछौना होता तो मजा आ जाता।'

इतने में क्या चमत्कार हुआ कि उसके दाईं ओर एक बढ़िया पलंग पर, मखमली बिछौना बिछा उसे दिखाई दिया।

वह पलंग पर बैठा। फिर टाँग-पर-टाँग रखकर सीधा लेट गया। वह गुदगुदे बिछौने का आनन्द लेते हुए सोचने लगा, 'शीतल छाया, मन्द समीर और यह बढ़िया बिछौना! काश कि यहाँ कोई प्रेयसी होती! सचमुच मजा आ जाता।'

और इतने में वहाँ एक युवती नारी प्रकट हुई। उसकी रूप-छटा अनोखी थी। उसके पारदर्शी [illegible] वस्त्र, मणि-मुक्ता जड़े सुवर्ण के आभूषण, घनी काली लम्बी केशराशि, हरिण जैसे नेत्र, शुक-नासिका, कमल की पंखुड़ियों जैसे रक्तिम होंठ, हंसिनी जैसी चाल, नूपुरों से उस एकांत को झंकृत करती हुई प्रकट हुई।

पथिक को अपनी आँखों पर विश्वास नहीं हो रहा था। आज का दिन कितना अनोखा था। जो कुछ मुंह से निकल रहा था, वही प्रत्यक्ष हो जाता था। अजीब चमत्कार था।

अब पथिक को कुछ खाने-पीने की इच्छा हुई। उसने सोचा, 'स्वादिष्ट षड्रस भोजन मिल जाता तो फिर क्या कहने थे।'

बस, सोचने-भर की देर थी। चार प्रकार का

षड्रस भोजन वहाँ मौजूद था। अन्न और मिष्ठान्न, शाक और दही-दूध, फल और मेवे, शीतल मधुर पेय सभी मनचाही चीजें वहाँ रखी थीं।

उस सुन्दरी ने प्रेम के साथ मधुर वार्तालाप करते हुए अपने हाथों से भोजन परोसा और पथिक ने जी भरकर खाया। वह तृप्त होकर आराम करने के लिए लेट गया।

लेटे-लेटे वह सोचने लगा, 'आज का दिन तो बड़ा विचित्र दिन है। कुछ समझ में नहीं आ रहा है। यह सब क्या है। मैंने बिछौने की इच्छा की तो बिछौना आ गया। कहाँ से आया, कौन रख गया, कुछ पता नहीं। फिर सोचते ही यह सुन्दरी भी आ गई। कौन है यह, किसने भेजा, कहाँ से आई, कुछ पता नहीं। भोजन की कामना हुई तो कितनी ही खाने-पीने की चीजें सामने आ गईं। इस जगह में क्या गुण है, पता नहीं। यह सब सपना है या सच, कहना कठिन है। पर इसे सपना कैसे कहूँ।

'हो न हो, इस वृक्ष पर कोई भूत-प्रेत रहता हो। उसी की माया से यह सब-कुछ हो रहा हो। कुछ कहा नहीं जा सकता।'

उसे कुछ डर लगने लगा। 'यहाँ मैं अकेला हूँ। यह सुन्दरी है पर कौन जाने यह कैसी है। सुना है,

जादू की चीजें जैसे आती हैं, वैसे ही चली भी जाती हैं। अगर ये सारी चीजें गायब हो जाएँ और कोई शेर-चीता यहाँ आ जाए तो मैं क्या करूँगा।'

वह घबराने लगा। और इतने में देखता क्या है कि सामने से एक शेर दहाड़ता हुआ चला आ रहा है।

शेर उसकी तरफ लपका। वह भागा और वृक्ष पर चढ़ने का प्रयत्न करने लगा पर घबराहट के कारण पैर फिसल गया और शेर ने उसे फाड़ डाला।

□□